International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(5): 137-142

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(5): 137-142
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 21-07-2018
Accepted: 24-08-2018

डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, (संस्कृत) राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, (संस्कृत) राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

पुराण–पूर्ववर्ती संस्कृत–साहित्य में गणेश : उद्भव और विकास

डॉ० मोहन लाल

प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध–पत्र में गणेश के उद्भव और विकास पर चर्चा करने से पूर्व सर्वप्रथम गणेश शब्द की व्युत्पत्ति की चर्चा करते हुए पुराण–पूर्ववर्ती संस्कृत–साहित्य में गणेश–विषयक संदर्भों का विवरण प्रदान किया जा रहा है।

(१) गणेश शब्द की व्युत्पत्ति तथा भिन्न–भिन्न कोशानुसारी गणेश के नामः

गणेश शब्दद्वय से बना है–गण+ईश। इनमें से गण शब्द की निष्पत्ति संख्यावाचक गण् धातु से अप् अथवा अच् प्रत्यय लगाने से होती है।[1] गण शब्द का प्रयोग विविधार्थों, यथा–झुण्ड, गिरोह, समूह, टोली, दल, श्रेणी, कक्षा, नौकरों की टोली तथा शिव के गणादि के लिए होता है, अतः गणेश का शाब्दिकार्थ गणों का ईश (ईश्वर) अर्थात् गणों का अधिपति (शिव–पुत्र) होता है। शब्दकल्पद्रुमानुसार गणनायक देवविशेष अथवा विघ्नाख्यदेवों का ईश नियन्ता शिवपुत्र ही गणेश है।[2]

हलायुध कोश में गणेश का गणसंज्ञक देवों के पति, अधीश्वर अथवा स्वामीरूपेण उल्लेख प्राप्त होता है।[3]

अमरकोश में गणेश के पर्यायवाचक शब्द–विनायक, विघ्नराज, द्वैमातुर, गणाधिप, एकदन्त, हेरम्ब, लम्बोदर और गजानन हैं।[4]

हेमचन्द्र ने गणेश के विघ्नेश, पशुपाणि, गजास्य और आखुग अभिधानों का उल्लेख किया है।[5]

तन्त्र में गणेश के प०चाशत् नामों तथा उन की शक्तियों का वर्णन प्राप्त होता है। गणेश की पचास संज्ञाएं ये हैं–

विघ्नेश, विघ्नराज, विनायक, शिवोत्तम, विघ्नकृत, विघ्नहर्त्ता, गण, एकदन्त, अदन्तक, गजवक्त्र, निर०जन, कपर्द्दी, दीर्घजिह्वक, शङ्कूकर्ण, वृषभध्वज, गणनायक, गजेन्द्र, शूर्पकर्ण, त्रिलोचन, लम्बोदर, महानन्दा, मृतमूर्ति, सदाशिव, आमोद, दुर्मुख, सुमुख, प्रमोदक, एकपाद, द्विजिह्व, पुरवीर, षण्मुख, वरद, वामदेव, वक्रतुण्ड, द्विरण्डक, सेनानी, ग्रामणी, मत्त, विमत्त, मत्तवाहक, जटी, मण्डी, खड्गी, वरेण्य, वृषकेतन, भक्षप्रिय, गणेश, मेघनाद, व्यापी और गणेश्वर। तन्त्रानुसार गणेश की पचास शक्तियाँ ये हैं :

ह्री, श्री, पुष्टि, शान्ति, स्वस्ति, सरस्वती, स्वाहा, मेधा, कान्ति, कामिनी, मोहिनी, नटी, पार्वती, ज्वलिनी, नन्दा, सुषमा, कामरूपिणी, उमा, तेजोवती, सत्या, विघ्नेशानी, सुरूपिणी, कामदा, मदजिह्वा, भूति, भौतिक, सिता, रमा, महिषी, शृङ्गिणी, विकर्णपा, भ्रकुटि, दीर्घघोणा, धनुर्द्धरा, यामिनी, रात्रि, कामान्धा, शशिप्रभा, लोलाक्षी, च०चला, दीप्ति, सुभगा, दुर्भगा, शिवा, भर्गा, भगिनी, शुभदा, कालरात्रि, कालिका और लज्जा।[6]

जनार्दन मिश्र के अनुसार ऊँ गणेश का प्रतीक है जिसका ऊर्ध्वभाग मस्तक तथा अधोभाग उदर के विस्तार का प्रतीक है। सूंड नाद और लड्डू बिन्दु जबकि दिनकर, वह्नि और चन्द्र उनके नयनत्रय कहे गये हैं।[7] गणेश की मूर्ति का ध्यान इन मन्त्रों से किया जाना चाहिए–

खर्वं स्थूलतनुं गजेन्द्रवदनं लम्बोदरं सुन्दरम्।
प्रस्यन्दन् मदगन्धलुब्धमधुपव्यालोलगण्डस्थलम्।।
दन्ताघातविदारितारिरुधिरैः सिन्दूरशोभाकरम्।
वन्दे शैलसुतासुतं गणपतिं सिद्धिप्रदं कामदम्।।

अर्थात् गणेश को स्थूलदेहधारी, गजानन, प्रलम्बजठर, सुन्दर, विघ्नेश, मदगन्धलुब्ध, भ्रमरों द्वारा व्यालोलकपोलस्थलयुक्त, दन्ताघात के कारण विदीर्णकृत रिपुरक्त से तन पर सिंदूर की शोभा के धारक गिरिजासुत, सिद्धिप्रदायक तथा कामनाओं के पूरक कहकर उनका स्तवन किया जाता है।[8]

(२) पुराण–पूर्ववर्ती संस्कृत–साहित्य में गणेश :
पुराण–पूर्ववर्ती संस्कृत साहित्य–वेद, आरण्यक, सूत्र–साहित्य, उपनिषदों और महाभारत में गणेश–विषयक संदर्भों का वर्णन इस प्रकार है–

(क) वेद
(१) ऋग्वेद
ऋग्वेद में गणेश के लिए गणपति शब्द प्रयुक्त हुआ है। प्रस्तुत वेद में इस शब्द का प्रयोग ब्रह्मणस्पति के विशेषणरूपेण किया गया है।[9]

(२) शुक्लयजुर्वेद
शुक्लयजुर्वेद के 'अश्वमेधाध्याय' में गणपति शब्द उल्लिखित है। मनुष्य को किस विधि से परमात्मा की उपासना करनी चाहिए– इस प्रसंग में गणपति–आवाहन–विषयक मन्त्र की प्राप्ति होती है।[10]

(३) मैत्रायणीय संहिता
मैत्रायणीय संहिता में गणेशविषयिकी गायत्री में गणाधीश को हस्तिमुख और दन्ती की संज्ञा से अलंकृत किया गया है।[11]

(ख) आरण्यकः
(१) ऐतरेयारण्यक
ऐतरेयारण्यक में भी ऋग्वेद–सदृश गणेश गणपतिनाम्ना अभिहित हैं तथा यहाँ भी यह शब्द ब्रह्मणस्पति के विशेषण के रूप में प्राप्त होता है। प्रस्तुत आरण्यक में एक मन्त्र द्वारा गणपति का यज्ञ में आगमन–हेतु आवाहन किया गया है।[12]

(२) तैत्तिरीयारण्यक
तैत्तिरीयारण्यकानुसार गणेश्वर वक्रतुण्ड और दन्ती हैं।[13]

(ग) सूत्र–साहित्य :
(१) बौधायन धर्मसूत्र
इस सूत्र ग्रन्थ में गणाधिप का अभिधान गणेश न होकर विनायक है। इसमें उनके आकार का वर्णन भी प्राप्त होता है कि वह टेढ़ी सूंड वाले, एकदन्ती, गजानन, लम्बोदर, स्थूल और विघ्नहर्ता हैं, अतः उनके लिए क्रमशः वक्रतुण्ड, एकदन्त, हस्तिमुख, लम्बोदर, स्थूल तथा विघ्नादि विशेषणों का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत सूत्र ग्रन्थ में गणेशार्थ अन्नबलि तथा उनके स्त्री तथा पुरुष पार्षदों का वर्णन भी प्राप्त होता है।[14]

(१) बौधायन गृह्यसूत्र
बौधायन गृह्यसूत्र के 'विनायक कल्प' प्रकरण में विनायकार्चना–विषयक वर्णन प्राप्त होता है। प्रस्तुत सूत्र में उन्हें कार्यों की निर्विघ्न सिद्धि–हेतु विघ्न तथा विघ्नेश्वरादि संज्ञाओं द्वारा आमन्त्रित किए जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। विघ्नेश्वर गणेश के लिए नमस्कार का विधान है।[15] प्रस्तुत ग्रन्थ में विनायक के लिए भूपति, भुवनपति, भूतानां पति, वीर, शूर, उग्र, भीम, हस्तिमुख, वरद विशेषणों के साथ उनके विघ्नपार्षद और विघ्नपार्षदियों का उल्लेख भी प्राप्त होता हैं।[16] विनायक के आदेश से आराधक के सकल कार्यों की अनायास ही सिद्धि होती है।[17]

(२) मानवगृह्यसूत्र
मानवगृह्यसूत्र में गणेश विनायक नाम्नाभिहित हैं। इसमें शालकटंकट, राजपुत्र–कूष्माण्ड, उस्मित और देवयजन– ये चतुर्विध विनायक वर्णित हैं। इनके द्वारा आविष्ट मनुष्य का अमंगल होता है क्योंकि ये विनायक दुष्ट शक्तियों के प्रतीक और भूत–प्रेतों के सदृश होते हैं। विनायकों से आविष्ट मनुष्य लोष्टों का मर्दन, तृणों का छेदन, अवयव–लेखन और दुःस्वप्नों का अवलोकनादि करता है। स्वप्नावस्था में वह उष्ट्र, शूकर और गर्दभ को देखता है। मार्गगमनावसर पर उसे प्रतीत होता है कि जैसे वह किसी से अनुगत है। राजपुत्र भी राज्य–प्राप्ति–लाभ से वंचित हो जाते हैं। पति की कामना करने वाली शुभलक्षणयुक्त कन्याओं को पति की प्राप्ति नहीं होती है। संतान की अभिलाषिणी सुलक्षणान्वित स्त्रियाँ भी संतति–प्राप्ति में सक्षम नहीं होती हैं। आचारवती स्त्रियों के अपत्य परलोक को प्राप्त होते हैं। श्रोत्रिय अध्यापक भी आचार्यत्व की प्राप्ति नहीं करता, अध्येता के अध्ययन में महाविघ्नोत्पत्ति होती है। वैश्यों के वाणिज्य का विनाश तथा कृषकों की कृषि अल्पफलप्रदा हो जाती है। इस प्रकार प्रस्तुत गृह्यसूत्र में विनायकों द्वारा आविष्ट मनुष्य सकलामंगलों की प्राप्ति करता है।[18]

(घ) उपनिषद्
गणपति आदि उपनिषदों में भी गणेश से संबधितोल्लेख प्राप्त होते हैं। उन का विवरण प्रदान किया जा रहा है–

(१) गणपत्युपनिषद्
प्रस्तुतोपनिषद् में गणपति नमस्कार, उनकी पूजन–विधि तथा पूजा लाभ का संक्षिप्त वर्णन भी प्राप्त होता है। सर्वप्रथम भगवान् गणपति को नमन किया गया है, तत्पश्चात् उन्हें ही सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता एवं साक्षात् आत्मा बताया गया है। उन्हें ही समस्त दृश्यमान स्वरूपों में विराजमान साक्षात् ब्रह्म, अमृत, नित्य, सत्य, और आत्म–स्वरूप कहा गया है। उन से ज्ञानग्राही शिष्य, उपदेष्टा गुरुवर के साथ–साथ श्रोता, दाता और धाता की रक्षा करने का आग्रह भी विहित है। उनसे पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और समस्त दिशाओं से रक्षार्थ भी कहा गया है। उनसे ऊर्ध्व, अधर और सर्वतः रक्षार्थ भी कामना की गई है। इस उपनिषद् में श्रीगणेश को वाङ्मय चिन्मय, आनन्दमय, ब्रह्ममय, सच्चिदानन्दस्वरूप, अद्वितीय तथा ज्ञानविज्ञानमय कहा गया है। सम्पूर्ण जगत् का आविर्भाव उनके द्वारा ही होता है तथा इसकी स्थिति का कारण भी वही हैं। यह समस्त विश्व उनमें ही विलीन हो जाता है। उनमें ही इस सम्पूर्ण संसार की प्रतीति होती है। इस उपनिषद् में गणेश को ही सम्पूर्ण संसार का कर्त्ता बताया गया है। पृथ्वी, जल, अनल, अनिल और आकाश वही कथित हैं। वही वाणी के चतुर्विध रूप–परा, पश्यन्ती, वैखरी और मध्यमा हैं तथा उन्हें गुणत्रय सत्त्व, रज और तम से परे अर्थात् गुणातीत कहा गया है। वह कालत्रयातीत तथा मूलाधार चक्र में नित्य विराजमान हैं। वह शक्तित्रयात्मक हैं तथा योगियों द्वारा नित्य उनका ध्यान किया जाता है। गणेश को ही ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, महेन्द्रानल, पवन, आदित्य, चन्द्र, ब्रह्म, तथा भूः भुवः स्वः रूप, त्रिलोक और ओंकारात्मक परब्रह्म कहा गया है।[19]
प्रस्तुतोपनिषद् में गणेशाभिधानगताक्षरोच्चारण की विधि वर्णित है। इसमें वर्णन प्राप्त होता है कि सर्वप्रथम गकारोच्चारणानन्तर ही अ का उच्चारण किया जाना चाहिए। तत्पश्चात् अनुस्वारोच्चारण कथित है। एतद्विधिना अनुस्वारयुक्त गकार ही बीजमन्त्ररूपेण अंगीकृत किया जाता है। इस विषय में यह तर्क दिया गया है कि अर्द्धचन्द्ररूप में ओंकार लसित (अवरुद्ध) है। गकार इसके पूर्व, अकार मध्य तथा अनुस्वार अन्त्य तथा उत्तररूपेण वर्णित हैं। नाद सन्धान तथा संहिता संधि हैं। यही गाणेशी विद्या है। इस उपनिषद् में ऋषि, छन्द तथा देवताओं के वर्णन–प्रसंग में ऋषि गणक, छन्द निचृद्गायत्री और देवता श्री महागणपति कथित हैं। एकदन्ती, वक्रतुण्ड का चिन्तन तथा दन्ती से प्रेरित किए जाने का विधान किया गया है।[20]
गणेश के चिन्तन में लीन पुरुष को योगियों में भी श्रेष्ठ बताते हुए गणपत्युपनिषद् में वर्णन आया है कि चतुर्हस्त, पाश तथा अंकुशधर्ता, अभय, वरद, एकदन्त, लम्बोदर, मूषकध्वज, रक्तवर्ण, शूर्पकर्ण, रक्तवस्त्रधारी रक्तचन्दनानुलिप्तावयवयुक्त रक्तपुष्पार्चित भक्तानुकम्पी, जगत्कारण, अच्युत, सृष्ट्यादि में आविर्भूत, प्रकृति और पुरुष से परे–इन विशेषताओं से युक्त गणेश का चिन्तन करने वाला योगिप्रवर होता है।[21]

गणपत्युपनिषद् में व्रातपति, गणपति, प्रमथपति, प्रलम्बजठर, एकदन्त, विघ्नविनाशक, शिवनंदन और वरदमूर्ति गणेश को नमन किया गया है। वह अथर्ववेद शिरा है। इस गणपत्युपनिषद् का पाठ करने वाला पुरुष ब्रह्मत्व को प्राप्त करने में समर्थ होता है। वह सर्वविघ्नों से बाधित नहीं होता है। वह सर्वत्र सुखानुभव करता है। वह पंचमहापातकों तथा उपपातकों से मुक्त हो जाता है। सायंकाल में प्रस्तुतोपनिषद् के अध्येता के दिवसकृत पाप नष्ट हो जाते हैं और प्रातःकाल में इसका पाठ करने वाले के रात्रिकृत। दोनों (प्रातः और सायं) कालों में पाठ करने वाला निष्पाप होकर चतुर्वर्ग (धर्मार्थकाममोक्ष) की प्राप्ति करता है। यह अथर्वशिरस् विद्या अशिष्य को नहीं अपितु सुशिष्य को प्रदान की जानी चाहिए। उसे मोहवशात् इस का प्रदायक पाप का अधिकारी बनता है। सहस्र बार इसका अध्येता जिस–जिस कामना का उच्चारण करता है, उसकी निश्चय ही सिद्धि हो जाती है। इसके द्वारा गणनायकाभिषेककर्त्ता वाग्मी (वक्ता) बन जाता है। चतुर्थी तिथि में उपवास करता हुआ इसका जप करने वाला विद्यायुक्त हो जाता है– यही आथर्वण वाक्य है। इस मन्त्र से तपस्या करने वाला कदापि भयभीत नहीं होता है। दूर्वाङ्कुरों द्वारा यजनकर्ता वैश्रवण (कुबेर) तुल्य (धनवान्) होता है। मोदकसहस्रों से यजन करने वाला पुरुष मनवांछित फल–प्राप्ति करता है। घृत और समिधाओं से यज्ञकर्त्ता समस्त पदार्थों की प्राप्ति करता है। आठ द्विजों को इसे सम्यग्रूपेण करवाने वाला तो सूर्यसदृश वर्चस्वी बनता है। सूर्यग्रहणकाल में किसी महासरिता अथवा प्रतिमा के सान्निध्य में जप करने वाला सिद्धमन्त्र होकर महाविघ्नों से मुक्त हो जाता है। वह महादोषों से भी मुक्ति प्राप्त कर लेता है। एवंविध ज्ञान का प्राप्तकर्त्ता भी सर्वविद् होकर सर्वज्ञ हो जाता है।[22]

(२) गणेशपूर्वतापिन्युपनिषत्

गणेशपूर्वतापिन्युपनिषत् में गणेश को प्रमथाधिपति, निर्गुण, सगुण और व्यापक कहा गया है। गौरीपुत्र गणेश के स्तवनकर्ता वह पद–लाभ करते हैं जिसे योगियों द्वारा प्राप्त किया जाता है।[23] प्रस्तुतोपनिषद् में गणेश को परब्रह्म की संज्ञा से विभूषित किया गया है। ब्रह्मा ने प्रजा की सृष्टि की और उसे भूः भुवः और स्वः – एतद्विधिना त्रिधा विभक्त किया। तत्पश्चात् ब्रह्मा द्वारा तप किया गया और उन्होंने आत्मा के गजरूपधारी, शशिवर्ण, चतुर्भुज देवरूपेण दर्शन किए जिसके द्वारा इन सम्पूर्ण प्राणियों का आविर्भाव होता है और तत्पश्चात् वे पुनः उसी में लय को प्राप्त करते हैं। उसी से प्राण मन, सकल इन्द्रियों, आकाश, वायु, जल, अग्नि और पृथ्वी की उत्पत्ति वर्णित है। तत्पश्चात् बहुविध मन्त्रों द्वारा उनका स्तवन किया गया है। गणेश का शिव से तादात्म्य स्थापित करते हुए उन्हें गजरूपधर्ता शिव ही कहा गया है। प्रस्तुतोपनिषद् में प्रजापति द्वारा सनकादि महायोगियों तथा वेदविदों द्वारा सेवित, मदोत्कट, लक्ष्मीसमन्वित महादेव के दर्शन किए गए जो भ्रमरों के समूह से व्याप्त और लसत्कर्ण एवं गजरूपधारी थे।[24] तत्पश्चात् गणपति द्वारा कहा गया कि वह वरद हैं। संस्तवन किए जाते हुए संतुष्ट दैवतदेवसुतात्मज गणेश ने भृगुसुत से यह वाक्य कहा कि उनके द्वारा गणेश को वक्रतुण्ड, अनाथों के नाथ और त्रिगुणात्मक शिव समझा जाना चाहिए।[25]

प्रस्तुतोपनिषद् में वक्रतुण्ड के होम–ज्ञाता को अमरता और सत्यलोक के आधिपत्य की प्राप्ति का उल्लेख प्राप्त होता है। वैनायिकी माया से ही संसृष्टि स्थिति और संहार का कार्य किया जाता है। उस माया का ज्ञाता मृत्यु०जय हो जाता है।[26] इस माया के प्रसंग में गणेश के स्वरूप का वर्णन करते हुए उन्हें वरद, वक्रतुण्ड, शिवोमातनय, विभु, रक्तवर्ण, चतुर्भुज आदि कहा गया है। रक्तवर्णीयाभायुक्त गणेश गूढजानु, स्थूलोरु, निम्ननाभि, कम्बुकण्ठ, लम्बोष्ठ और लम्बनासिकायुक्तरूपेण वर्णित हैं।[27]

(३) गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद

प्रस्तुत उपनिषद् में गणेश का विशद वर्णन किया गया है। गणेश को ब्रह्म और आत्मा कहा गया है। आत्मा चतुष्पाद कथित है। चतुर्थ पाद जो कि अन्तः प्रज्ञ, न बहिः प्रज्ञ, नोभयप्रज्ञ, न प्रज्ञ, न अप्रज्ञ, न प्रज्ञान, अदृष्ट, अव्यवहार्य, आग्राह्य, अलक्षण, अचिन्त्य, अव्यपदेश्य, ऐकात्म्य, प्रत्ययसार, प्रपच को शान्त करने वाला और शिव से अद्वैत है वह गणेश आत्मा जाननी चाहिए। जिन मनुष्यों के द्वारा ''विनायकोऽहम्''– इस प्रकार कहा जाता है, वे निश्चितरूपेण इस संसार से मुक्त हो जाते हैं। यही परम ध्यान और तप है। विनायक का ज्ञान तथा पूजन भवसागर से मुक्ति का साधन कहा गया है। अश्वमेधसहस्र और शतसंख्यक वाजपेय यज्ञों का फल भी एक ध्यानयोग की सोलहवीं कला के तुल्य नहीं होता है।[28]

गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् में गणेश ही विष्णु, शिव, ब्रह्मा, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, वायु, अग्नि आदिरूपेण वर्णित हैं। गणेश को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। गणेश के सन्दर्भ में यह मन्त्र उल्लिखित है–

ऊँ गणानां त्वा गणपतिः। सप्रियाणां त्वा प्रियपतिः।
सनिधीनां त्वा निधिपतिः।
ऊँ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि।
तन्नो दन्ती प्रचोदयात्। [29]

गणेश सत्, पर, ब्रह्म, नाद तथा महानाद कथित हैं। वह गणेश महान्, अणु, वन्द्य, मुख्य, पूज्य, रूपवान्, अरूपवान्, द्वैत, अद्वैत, स्थावर और जंगमस्वरूपवान्, सचेतन, विचेतन, अव्यक्त, श्रेष्ठ, वेगवान्, अतिह्रस्व, अतिस्थूल, आकाश, जल, पृथ्वी, न शीत, न उष्ण, न दृश्य, न वर्ण, न पीत, न श्वेत, न रक्त, न कृष्ण और रूपनामगुणरहित माने गये हैं। उन्हें ही शुद्ध, निर्गुण, निरहंकार, निर्विकल्प, निरीह, निराकार, आनन्दरूप, तेजरूप, अनिर्वाच्य, अप्रमेय, पुरातन, आदि, अक्षर, अनन्त, अव्यय, महान् पुरुष कहा गया है। उनके शुद्ध और शबल रूप से प्रकृति महत्तत्वेत्यादि की उत्पत्ति होती है। उनसे अहंकार और पचतन्मात्राएँ, उनसे पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश– ये पंच महाभूत, पंचमहाभूतों से पृथ्वी, पृथ्वी से ओषधियाँ, ओषधियों से अन्न, अन्न से पुरुष, उससे समस्त जगत् और समस्त भूतों और देवों की उत्पत्ति होती है। देवता यज्ञ द्वारा जीवन धारण करते हैं। वह गणेश ही आत्मा हैं। गणेश ही ब्रह्म हैं। इस संसार में भूत, जायमान और भव्य– ये सब गणेश ही जानने चाहिए, एतदतिरिक्तान्य किंचिदपि नहीं है। जो मनुष्य एवंविध ब्रह्म को जानता है, वह ब्रह्म ही हो जाता है। ब्रह्मा, विष्णुप्रभृति गणों के ईश ही गणेश नाम्ना अभिहित होते हैं।[30]

सृष्टि की रचना से सम्बन्धित प्रसंग भी प्रस्तुतोपनिषद् में उल्लिखित है कि जब ब्रह्म द्वारा ब्रह्मा को सृष्टि की रचनार्थ आदेश प्रदान किया गया, तब ब्रह्मा ने कहा कि उन्हें एतद्विषयक ज्ञान नहीं हैं। तत्पश्चात् गणेश ने उन से कहा कि ब्रह्मा को उनके शरीर को अन्तर्गत ब्रह्माण्ड देखकर तथाविध सृष्टि की निर्मिति करनी चाहिए। ब्रह्मा ने जन्मद्वार से अवलोकन करने के पश्चात् सागरों, नदियों, पर्वतों, वनों, पृथ्वी, गगन, पाताल, मनुष्यों, पशुओं, मृगों, नागों अश्वों, गायों, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रों, अग्नि, वायु और दिशाओं की सृष्टि की। तदनन्तर ब्रह्मा कहने लगे कि उनके परे किञ्चिदपि नहीं था और वही सब के ईश थे, तब क्रूर उत्पन्न हुए जो निज बृहत्काय जिह्वाओं से वसुन्धरा को चाट रहे थे और उनकी दंष्ट्राओं में आकाश व्याप्त था और वे उच्च स्वर से शब्द करते हुए ब्रह्मा के हननार्थ उद्यत हो गए। उनसे भयभीत ब्रह्मा द्वारा श्री गणेश का स्मरण किया गया। तत्पश्चात् उन्होंने कोटि–कोटि दिनकरों के समानाभायुक्त और आनन्दस्वरूप गजवक्त्र के दर्शन करने के अनन्तर उनका स्तवन करते हुए उन्हें समस्त विश्व का रचयिता तथा संहारकर्ता कहा। इस प्रकार स्तुत गणेश द्वारा उन्हें तप करने हेतु कहा गया। उनके तप से प्रसन्न गणपति ने उनसे वर मांगने को कहा। तदनन्तर ब्रह्मा ने उन्हें विष्णु, शंकरादि कहते हुए पुनः उनकी स्तुति की। तब गणेश द्वारा प्रदत्त शक्ति से उन्होंने सर्जन–कर्म किया। गणेश ने शिव को संहारार्थ कहा। उनसे प्राप्त शक्ति से हर गर्वित हो गए। तदनन्तर व्योम में व्याप्त गजवक्त्रों से महान् शब्द करते हुए हर के हरणार्थ उद्यत हो गए। उनके

अवलोकनानन्तर हर ने रुदन करना प्रारम्भ किया जिससे उनकी संज्ञा ही रुद्र हो गई। उन्होंने उस पुरुष गणेश की स्तुति करते हुए उन्हें ब्रह्मा, कर्ता, प्रधान, विश्वाधारादि कहा और उन्हें नमन किया। इस पर गणेश के कहने पर रुद्र संहर्ता बन गए। एतद्विधिना वर्णित गणेश का जो ज्ञान प्राप्त करता है वह गणेश ही हो जाता है।[31]

गणेशोत्तरतापिन्युपनिषद् में श्रीगणेश से सत् और उससे ब्रह्मोत्पत्ति कथित है। उसका ज्ञाता परमधाम को प्राप्त करता है। इसमें आगे कहा गया है कि वह अनादि, अनन्त तथा विज्ञानरूप और समस्त देवों के देव हैं। सूर्य भी उनसे त्रस्त होकर उदित होता है, वायु भी भीत होकर बहती है, अग्नि भी इनसे भयभीत होकर स्थित है। वह चित्स्वरूप, निर्विकार और अद्वैत हैं। वह गजाकार और अनिर्वचनीया माया हैं जो कि जगद्बीजरूपा है। वही प्रकृति और प्रधान हैं। गणेश सर्वत्मा, सर्वदेवात्मा और अद्वितीय हैं। जिस मनुष्य को यह ज्ञान हो जाता वह गणेश ही हो जाता है।[32]

(४) बृहदारण्यकोषनिषद्

बृहदारण्यकोषनिषद् में श्री गणेश वाचस्पतिरूपेण उल्लिखित हैं। इसमें वाणी ब्रह्म नाम्ना वर्णित है। प्राण को वाणी का पति कहा गया है, अतएव प्राण का नाम ब्रह्मणस्पति अथवा वाचस्पति है।[33]

(ङ) स्मृति

याज्ञवल्क्य स्मृति

(१) याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार भी गणेश श्रेष्ठ हैं। विघ्नविनाशक विनायक के प्रसादवशात् ही महादानपुण्यादि की सिद्धि सम्भव होती है, अतः उनकी अभ्यर्चना अत्यावश्यक है। प्रारम्भ में कर्म में विघ्नों की सिद्ध्यर्थ ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र के द्वारा (पुष्पदन्तप्रभृति) गणों का आधिपत्य विनायक को प्रदान कर दिया गया जिससे उनके द्वारा विनायकादि ग्रह–पूजन न करने वाले प्राणियों के कर्म में विघ्नोत्पत्ति द्वारा उनका अनिष्ट किया जा सके तथा आराधक को उनके द्वारा अभीष्ट–सिद्धि की जानी चाहिए। प्रस्तुत स्मृति में विनायक के अप्रसन्नतासूचक लक्षणों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है, यथा–स्वप्नावस्था में जल का अत्यन्त अवगाहन अथवा जल स्रोत में निमज्जन, मुण्डों तथा काषायवस्त्रधर्त्ता पुरुषावलोकन, कच्चा माँस भक्षण करने वालों (गीधादि पक्षियों तथा पशुओं का) अधिरोहण, अन्त्यज, गर्दभ तथा उष्ट्रसहित अवस्थित होनादि। जागृतावस्था के लक्षणों में–चलते हुए स्वयं को शत्रुओं के द्वारा अनुगम्यमान मानना, विमना होना, प्रारम्भकृत कर्मों में असफल होना, निष्कारण ही दैन्य को प्राप्त करना–परिगणित हैं। विनायकोपसृष्ट कर्मफल–प्राप्ति से वंचित रह जाते हैं। एतादृश नृपनंदन भी राज्य–प्राप्ति में असमर्थ होता है। (रूप–लक्षण–कुलादि से युक्त) कुमारी भी इच्छित भर्ता–लाभ नहीं कर पाती है। श्रोत्रिय आचार्यत्व तथा शिष्य अध्ययन (फल) को प्राप्त करने में असफल रहते हैं। विनायक की अप्रीतिवशात् वैश्य लाभ तथा कृषक कृषिविषयक फल को प्राप्त करने में असमर्थ होता है।[34]

प्रस्तुत स्मृति में विनायकोपसर्ग के परिहारार्थ कतिपय कर्मों का विधान किया गया है, यथा (शुभ चन्द्र तथा नक्षत्रादि से युक्त किसी) पुण्य दिवस में शास्त्रोक्त–विधिना विधिना विनायकोपसृष्ट का अभिषेक किया जाना चाहिए। अभिषेक की विधि यह है कि आज्य (घृत) युक्त श्वेतसर्षप के चूर्ण से अवयवों पर उद्वर्तन (उबटन) किए हुए तथा प्रियंगु, नागकेशरेत्यादि सर्वौषधि तथा चन्दन, अगुरु, कस्तूरीप्रभृति सर्वगन्धों से उपलिप्त शिरयुक्त तथा भद्रासनस्थ पुरुष के समक्ष स्थित (शुभ श्रुताध्ययन, सच्चरित्रता और सौम्याकृतियुक्त) चार ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन करवाया जाना चाहिए।[35] इसी समय गृह्योक्त विधिपूर्वक पुण्याहवाचन भी किया जाना चाहिए। एकसदृशवर्णान्वित कलशचतुष्ट्य से सरिता–संगम अथवा अशोष्य ह्रद से जल लाने के अनन्तर उस में अश्व स्थान, गजस्थान, वल्मीक, सरित्संगम तथा अशोष्य ह्रद से पंचविध आह्रत मृत्तिका, गोरोचना, चन्दन तथा कुंकुमेत्यादि गन्धों तथा गुग्गुल को निक्षिप्त किया जाना चाहिए। वृषभ के रक्त चर्म पर (श्रीपर्णी–निर्मित) भद्रासन स्थापित किया जाना चाहिए। इसी भद्रासन पर स्थित विनायकोपसृष्ट का द्विजों द्वारा स्वस्तिवाचन कराया जाना चाहिए। भद्रासन श्वेतवस्त्रयुक्त होना चाहिए। कलशचतुष्ट्य को आम्र–पल्लवप्रभृति से तथा माल्य, चन्दनादि से अलंकृत करके चारों दिशाओं में रखा जाना चाहिए। प्रत्येक कलश से सलिल लेकर गुरु–स्नान करवाया जाना चाहिए। ऋषि–मुनियों द्वारा पावनकृत सहस्रशक्तिसमन्वित शतधार जल से विनायकोपसृष्ट की शान्त्यर्थ अभिषेक किया जाना चाहिए। पावनकृत जलों से विनायकोपसृष्ट पवित्र किए जाने चाहिए। नृप, वरुण, दिनकर, बृहस्तपति, महेन्द्र, पवन और सप्तर्षियों द्वारा उन्हें ऐश्वर्य प्रदान किया जाना चाहिए। उनके केशों, सीमन्त, मस्तक, ललाट, कानों और नयनों में जो दौर्भाग्य है–ये सब पवित्र जलों द्वारा सदा–सदा के लिए नष्ट किए जाने चाहिए। एतद्विधिना अभिषिक्त की मूर्धा पर सव्य कर में कुशा ग्रहण करके उदुम्बर–वृक्षोद्भव काष्ठ–निर्मित स्रुव से सर्षप तैल का मित, संमित, शाल, कटंकट और राजपुत्र–इन छः विनायक की संज्ञाओं से प्रत्येक नाम के आदि में प्रणव और चतुर्थ्यन्त विभक्तियुक्त नाम के आगे स्वाहा लगा कर हवन किया जाना चाहिए, यथा–ऊँ मितायस्वाहादि।[36]

तदनन्तर प्रणव तथा नमस्कारयुक्त इन्द्रादि के नामों के आगे चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग कर मन्त्रों द्वारा कृताकृत तण्डुल, तिलपिष्ट मिश्रितौदन, पक्वापक्व मत्स्य तथा माँस, चित्र–विचित्र कुसुम, सुगन्धित द्रव्य, त्रिविध सुरा, मूलक, पूरिका, अपूप और उण्डेरकस्रज् की बलि शूर्प में कुशा को आस्तीर्ण करके चतुष्पथ में दी जानी चाहिए। इसी भांति दधि, अन्न पायस, गुड़पिष्ट मोदकादि को विनायक तथा उनकी माता अम्बिका को मन्त्रसहित भेंटकर भूमि में शिर लगा कर दूर्वा, सर्षप और पुष्पा०जलि से अर्घ्य प्रदान करते हुए[37] भगवती से प्रार्थना की जानी चाहिए कि उनके द्वारा विनायकोपसृष्ट को सौन्दर्य, कीर्ति, भाग्य, सुत, धन–सम्पदा को प्रदान करते हुए उसकी समस्त कामनाओं को पूर्ण किया जाना चाहिए।[38] इस समस्त विधि–विधान के पश्चात् यजमान को शुक्लाम्बरधारी होकर माल्यानुलेपनेत्यादि धारण करके ब्राह्मणों को भोजन करवाना चाहिए और गुरु को भी वस्त्रयुग्म और दक्षिणा प्रदान करनी चाहिए। इस प्रकार विधिपूर्वक विनायक तथा ग्रहों की अर्चना सम्पादित करके विघ्नोपशम होने से समस्त कर्मों का फल तथा उत्तम श्री की प्राप्ति अवश्यम्भावी हो जाती है। जो प्राणी प्रतिदिवस आदित्य, स्वामी कार्तिकेय और महागणपति का पूजन करता है वह अभिलषित सिद्धि की प्राप्ति करता है।[39]

(च) महाभारत

महाभारत में गणेश लेखक रूपेणोल्लिखित हैं। महर्षि व्यास के मन में जब बृहत्काय आर्षकाव्य महाभारत के लेखन की इच्छा उत्पन्न हुई, तब उन्हें इसका लेखन–कार्य किसके द्वारा सम्पन्न करवाया जाना चाहिए–यह चिन्ता हुई, विधाता ने उन्हें एतदर्थ श्री गणेश का स्मरण करने हेतु कहा।[40] ब्रह्मा के परामर्श से सत्यवतीसुत व्यास ने हेरम्ब का स्मरण किया और स्मृतमात्र ही भक्तों द्वारा चिन्तित कार्यों के पूरक विघ्नेश गणेश व्यास के समीप समुपस्थित हुए। व्यास ने भक्ति और श्रद्धापूर्वक उनकी अर्चनानन्तर उन्हें आसन पर विराजमान करवाया।[41] उनके द्वारा मनसा कल्पित ग्रन्थ को उनके द्वारा प्रोक्त वचनों के अनुसार लेखनार्थ आग्रह करते हुए उन्हें महाभारत का लेखक बनने को कहा।[42] गणेश ने व्यास के इस आग्रह की पूर्त्यर्थ यह कहा कि उनकी लेखनी को क्षणमात्र के लिए भी विराम नहीं मिलना चाहिए। महर्षि व्यास ने भी गणनायक से यह प्रण करवा लिया कि वह उनके द्वारा उच्चारित शब्दों के अर्थ पर विचार किए बिना एक भी पद्य का लेखन नहीं करेंगे। गणेश ने ओंकारोच्चारणपूर्वक एतद्हेतु स्वीकृति प्रदान करते हुए लेखन–कार्य का श्रीगणेश कर दिया। कतिपय सरल पद्योच्चारणानन्तर सत्यवतीनन्दन के मुखारविन्द से एक–दो क्लिष्ट पद्य निःसृत हो जाते थे और जब तक स्वयं सर्ववेत्ता गणेश्वर उनके अर्थ पर विचार

करने में प्रवृत्त होते थे, तब तक वेदव्यास अन्य अनेक पद्य रच डालते थे।[43]

(३) शोध–पत्र का प्रतिपाद्य विषय

बलदेव उपाध्याय प्रणीत पुराण–विमर्ष, डॉ. गिरिधर शर्मा लिखित पुराण–परिषीलन, डॉ. कृष्ण मणि त्रिपाठी की कृति पुराण–पर्यालोचन, सिद्धेष्वरी राय कृत पौराणिक धर्म एवं दर्षन, डॉ. चमन लाल गौतम विरचित देव–रहस्य, श्री कृष्ण मणि त्रिपाठी रचित पुराण–तत्त्व–मीमांसा, डॉ. शत्रुघ्न नाथ तिवारी कृत पुराणस्य तन्त्रागमः सिद्धान्तः और सत्यनारायण त्रिपाठी द्वारा विरचित ब्रह्मवैवर्त : एक अध्ययन इत्यादि रचनाओं में पुराणों से संबद्ध विविध विषय वर्णित हैं परन्तु अद्यावधि गणेष पर कोई स्वतंत्र शोध–कार्य नहीं किया गया है जबकि पुराणों में गणेष का वर्णन वैविध्य और विचित्रता संजोए हुए है। पुराणों में वर्णित अलौकिक दिव्यतासमन्वित गणेष अलौकिक देव हैं, पुराण पूर्ववर्ती संस्कृत साहित्य में गणेष का विषिष्ठ स्थान है, इसलिए शोध–कर्त्ता द्वारा निज शोध–पत्र के लिए पुराण–पूर्ववर्ती संस्कृत–साहित्य में गणेष :– उद्‌भव और विकास विषय का चयन किया गया है क्योंकि शोध–कर्त्ता को पूर्ण विष्वास है कि प्रस्तुत शोध–कार्य अन्य अनुसंधानकर्त्ताओं को एतादृष विषय पर अनुसंधान करने हेतु प्रेरित करेगा।

सन्दर्भ

1. गणयते गणयति वा कर्म्मण्यप्। कर्तरि अच् वा। शब्दकल्पद्रुम (द्वितीय भाग), पृ. 292.
2. गणानां गणाख्यदेवविशेषाणां विघ्नाख्यदेवानां वा ईशः नियन्ता शिवपुत्रः। वही, पृ. 294.
3. गणानां गणसंज्ञकानां देवानां पतिः अधीश्वरः स्वामी वा। हलायुध कोश, पृ. 266.
4. विनायको विघ्नराजद्वैमातुरगणाधिपाः।
   अप्येकदन्त–हेरम्ब–लम्बोदर–गजाननाः।। अमरकोश,1/1/40.
5. शब्दकल्पद्रुम (द्वितीय भाग), के पृ. 294 से उद्‌धृत
6. हिन्दी विश्वकोश, पृ. 154.
7. भारतीय प्रतीक विद्या, पृ. 39–40.
8. हिन्दी विश्वकोश, पृ. 154.
9. गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपश्रवस्तमम्।
   ज्येष्ठराजं ब्रह्मणा ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम्।। ऋ., 2/23/1.
10. गणानान्त्वा। गणपति हवामहे प्रियाणान्त्वाप्रियपति हवामहे निधिनान्त्वानिधिपति
    हवामहेव्वसोमम्।। आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम्।। शु. यजु. सं, 23/19.
11. तत् कराटाय विद्‌महे ह स्तिमुखाय धीमहि।
    तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।। मै. सं., 2/9/1/6.
12. गणानां त्वा गणपतिं हवामह इति ब्राह्मणस्पत्यं,
    ब्रह्म वै बृहस्तपतिब्रह्मणैनैव तद्विपज्यति, प्रथश्च यस्य सप्रथश्च नामेति। ऐत.आ., 1/21.
13. तत् पुरुषाय विद्‌महे वक्रतुण्डाय धीमहि।
    तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।। तै.आ., 10/1/6.
    बौ.ध.सू., 2/5/6.
14. विघ्न विघ्नेश्वरागच्छ विघ्नित्येव नमस्कृत।
    अविघ्नाय भवान् सम्यक् सदास्माकं भव प्रभो।। बौ.गृ.सू., 3/3/11.
15. ऊँ विनायकाय भूपतये नमो विनायकाय स्वाहा। ऊँ विनायकाय भुवनपतये नमो, विनायकाय भूतानां पतये नमो...विघ्नाय स्वाहा, वीराय स्वाहा, शूराय स्वाहा, उग्राय स्वाहा, भीमाय स्वाहा, हस्तिमुखाय स्वाहा, वरदाय स्वाहा, विघ्नपार्षदेभ्यः स्वाहा, विघ्नपार्षदीभ्यः स्वाहा....। वही, 3/3/11–14.
16. विनायक महाबाहो विघ्नेश भवदाज्ञया।
    कामा मे साधिताः सर्वे इदं बध्नामि कङ्कणम्।। वही, 3/3/15.
17. अथातो विनायकान् व्याख्यास्यामः। शालकटंकटश्च कूष्माण्डराजपुत्रश्चोस्मितश्च देवयजनश्चेति। एतैरधिगतानाम् इमानि रूपाणि भवन्ति। लोष्ठं मृद्‌नाति। तृणानि छिनत्ति। अंगेषु लेखान् लिखति। अपस्वप्नं पश्यति। उष्ट्रान् शूकरान् गर्दभान् स्वप्नान् पश्यति। अध्वानं व्रजन् मन्यते पृष्ठतो मे कश्चिद् व्रजति। एतैः खलु
    विनायकैराविष्टा राजपुत्रा लक्षणवन्तो राज्यं न लभन्ते। कन्याः पतिकामाः लक्षणवत्यो भर्तन न लभन्ते। स्त्रियः प्रजाकामा लक्षणवत्य प्रजा न लभन्ते। स्त्रीणां आचारवतीनां अपत्यानि म्रियन्ते। श्रोत्रियोऽध्यापक आचार्यत्वं न प्राप्नोति। अध्येतृणामध्ययने महाविघ्नानि भवन्ति। वणिजां वाणिज्यपथो विनश्यति कृषिकाराणां कृषिरल्पफला भवति....। मा.गृ.सू., 2/14.
18. 108 उपनिषद् (साधना खण्ड), पृ. 381–382.
19. वही, पृ. 383.
20. वही, पृ. 383–384.
21. वही, पृ. 384–385.
22. गणेशं प्रमथाधीशं निर्गुणं सगुणं विभुम्।
    योगिनो यत्पदं यान्ति तं गौरी नन्दनं भजे।।
    ईशादिविंशोत्तरशतोपनिषदः, पृ. 629.
23. अथापश्यन्महादेवं श्रिया जुष्टं मदोत्कटम्।
    सनकादिमहायोगिवेदविद्भिरुपासितम्।।
    द्रुहिणादिमदेवेशषट्‌पदालिविराजितम्।
    लसत्कर्णं महादेवं गजरूपधरं शिवम्।। वही, पृ. 630.
24. स संस्तुतो दैवतदेवसूनुः सुतं भृगोवाक्यमुवाच तुष्टः।
    अवेहि मां भार्गव वक्रतुण्डमनाथनाथं त्रिगुणात्मकं शिवम्।। वही, पृ. 630.
25. वही, पृ. 630–31.
26. क्षीरोदार्णवशायिनं कल्पद्रुमाधः स्थितं वरदं व्योमरूपिणं।
    प्रचण्डदण्डदोर्दण्डं वक्रतुण्डस्वरूपिणं पार्श्वाधःस्थितं कामधेनुं शिवोमातनयं विभुम्।।
    रुक्माम्बरनिभाकाशं रक्तवर्णं चतुर्भुजम्।
    कपर्दिनं शिवं शान्तं भक्तानामभयप्रदम्।।
    उन्नतप्रपदाङ्‌गुष्ठं गूढगुल्फं सपार्ष्णिकम्।
    पीनजघं गूढजानुं स्थूलोरुं प्रोन्नमत्कटिम्।।
    निम्ननाभिं कम्बुकण्ठं लम्बोष्ठं लम्बनासिकम्।
    सिद्धिबुद्धयुभयाश्लिष्टं प्रसन्नवदनाम्बुजम्।। वही, पृ. 631–32.
27. ईशादिविंशोत्तरशतोपनिषदः, पृ. 633–34.
28. वही, पृ. 634.
29. वही, पृ. 635.
30. वही, पृ. 635–36.
31. वही, पृ. 636.
32. एष उ एव ब्रह्मणस्पतिवाग् वै ब्रह्म तस्या एष पतिस्तस्मादु ब्रह्मणस्पति। बृहदारण्यकोपनिषद्, 1/3/21.
33. याज्ञ. स्मृ., 1/11/271–276.
34. वही, 1/11/277.
35. वही, 1/11/278–285.
36. वही, 1/11/286–290.
37. रूपं देहि यशो देहि भाग्यं भगवति। देहि मे।
    पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे।। वही, 1/11/291.
38. वही, 1/11/292–294.
39. लेखनार्थाय गणेशः स्मर्यतां मुने। महा. (आ.प.), 1/74.
40. ततः सस्मार हेरम्बं व्यासः सत्यवतीसुतः।
    स्मृतमात्रो गणेशानो भक्तचिन्तितपूरकः।।
    तत्राजगाम विघ्नेशो वेदव्यासो यतः स्थितः।
    पूजितश्चोपविष्टश्च व्यासेनोक्तस्तदानघः।। वही, 1/75–76.

41. लेखको भारतस्यास्य भव त्वं गणनायक।
    मयैव प्रोच्यमानस्य मनसा कल्पितस्य च।। वही, 1/77.
42. सर्वज्ञोऽपि गणेशो यत् क्षणमास्ते विचारयन्।
    तावच्चकार व्यासोऽपि श्लोकानन्यान् बहूनपि।। वही, 1/83.